

भारतीय और पाश्चात्य विचारों में पर्यावरणीय बोधभारतीय और पाश्चात्य विचारों में पर्यावरणीय बोध

डॉ अनुपम पाठक

असिस्टेंट प्रोफेसर(भूगोल विभाग)

के. ए .पी .जी .कॉलेज कासगंज

प्रमुख शब्द- पर्यावरण बोध, एकात्म ,संभववाद ,नियतिवादपर्यावरण बोध, एकात्म , संभववाद ,नियतिवाद

शोध संक्षेप- आज संपूर्ण विश्व में पर्यावरण अवनयन पर्यावरण असंतुलन जैसे शब्द गंभीर चर्चा का विषय है। इस क्रम में पर्यावरणीय असंतुलन और अवनयन को दूर करने के लिए स्थानीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बहुत सारी औपचारिक और अनौपचारिक प्रयास किए जा रहे हैं चाहे वह 1972 का स्टॉकहोम शिखर सम्मेलन हो या 1992 से प्रारंभ हुई पृथ्वी सम्मेलनो श्रंखला सभी प्रयासों का धरातल पर प्रभाव नाममात्र का ही रहा क्योंकि सामान्य जनमानस से पर्यावरण का वास्तविक बोध ही नहीं है। पर्यावरण के संदर्भ में माननीय समझ केवल औपचारिक और उपयोगिता आधारित है वस्तुतः हम समझ ही नहीं पा रहे कि पर्यावरण क्या है। पर्यावरण की संरचना क्रियाशीलता किस प्रकार की है और हमारा पर्यावरण से क्या संबंध है ? आज यदि हम हमारी प्रजा से प्रकृति ,पर्यावरण और मानव के संबंधित समावेशी क्रिया को स्पष्ट नहीं कर पा रहे हैं तो इसके मूल में आज के पर्यावरण के संदर्भ में पश्चात जगत के विचार हैं इसलिए यहां सबसे पहले पर्यावरण बोध को समझना होगा भारतीय और पाश्चात्य विचारों के तुलनात्मक संदर्भ में।

परिचय- वर्तमान में संपूर्ण विश्व पर्यावरण चिंतन के संदर्भ में बड़ा गंभीर है। चारों ओर पर्यावरण विशेष अध्ययन का विषय बन गया है। आज हम विज्ञान और तकनीक के बाद यदि किसी विषय पर प्रमुखता से सर्वाधिक चिंतन कर रहे हैं तो वह है पर्यावरण। पिछले 50 वर्ष में घटते वन क्षेत्र, बढ़ते प्रदूषण ,बदलते मौसम ने हमें मजबूर कर दिया है कि हम पर्यावरण के अध्ययन को प्राथमिकता दें परिणाम स्वरूप आज पर्यावरण अध्ययन को एक अलग विषय के रूप में स्वीकार किया गया है और पर्यावरण संरक्षण के लिए अंतरराष्ट्रीय राष्ट्रीय और स्थानीय स्तर पर संपूर्ण विश्व में गहन चिंतन की श्रंखला प्रारंभ हो गई है। जहां एक तरफ संपूर्ण विश्व भौतिक विकास के नए नए आयाम स्थापित कर रहा था वहीं इस विकास की कीमत पृथ्वी चुका रही थी ,और आज भी चुका रही है। विशेष

गौर करने वाली बात यह है कि जहां हम भौतिकवादी विज्ञान में बहुत आगे हैं वहीं सामान्य जनमानस में पर्यावरण बोध के संदर्भ में हमारे सारे प्रयास विफल हो रहे हैं। इस संदर्भ में यह भी विशेष ध्यान और चिंतन का विषय है कि पर्यावरण संरक्षण के प्रयास सार्थक और सही दिशा में है या नहीं। यदि हम बीमारी के मूल को नहीं समझ सकते हैं तो हम उसका इलाज भी नहीं कर सकते। इस प्रकार सारे प्रयास अंतरराष्ट्रीय, राष्ट्रीय और स्थानीय स्तर पर प्रभावशाली तभी होंगे जब तक कि सामान्य जनों में पर्यावरण के प्रति उनका एकात्म ना हो। क्योंकि पृथ्वी के विनाश के लिए सरकारें एवं उद्योग ही जिम्मेदार नहीं है बरन सामान्य व्यक्ति और उसके क्रियाकलाप भी पर्यावरण में होने वाले असंतुलन के लिए जिम्मेदार हैं। इसके लिए बड़े-बड़े प्रयासों के अलावा सामान्य जनमानस में पर्यावरण की समझ प्रायोगिक रूप में समावेशित हो यह आवश्यक है। क्योंकि पर्यावरण के संदर्भ में माननीय समझ केवल औपचारिक और उपयोगिता आधारित है वस्तुतः हम समझ ही नहीं पा रहे कि पर्यावरण क्या है। पर्यावरण की संरचना क्रियाशीलता किस प्रकार की है और हमारा पर्यावरण से क्या संबंध है? आज यदि हमारी प्रजा प्रकृति, पर्यावरण और मानव के संबंध समावेशी क्रिया को स्पष्ट नहीं कर पा रहे हैं तो इसके मूल में आज के पर्यावरण के संदर्भ में पश्चात जगत के विचार हैं इसलिए यहां सबसे पहले पर्यावरण शब्द की व्युत्पत्ति को समझना होगा।

पर्यावरण शब्द की उत्पत्ति फ्रेंच शब्द इनवेयरोनेट से हुई है जिसका शाब्दिक अर्थ है आस-पड़ोस। इस शब्द के मूल में आसपास का घेरा है ना की प्रकृति की चेतना। प्रथम दृष्टया यह शब्द व्यक्ति को खुद से नहीं जोड़ पाता है। इस शब्द से सामान्य जनमानस के मन में यही विचार आता है कि पर्यावरण हमारे आसपास की कोई दूसरी वस्तु है जिसका हमसे कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं है। व्यक्ति स्वभाव से स्वार्थी होता है यदि उसका किसी चीज से प्रत्यक्ष जुड़ाव नहीं लगता तो वह उस वस्तु के संबंध में उदासीन हो जाता है या उसके लिए औपचारिक व्यवहार प्रेषित करता है। आज इसी कारण पर्यावरण के संतुलन एवं संरक्षण के लिए जितने भी प्रयास होते हैं वह ज्यादा सार्थक ना होकर औपचारिक ही रह जाते हैं। क्योंकि सामान्य व्यक्ति इन प्रयासों में औपचारिक रूप से ही जुड़ा होता है, क्योंकि वह समझता है कि पर्यावरण के संतुलन या उसकी गुणवत्ता के खराब होने से हमारे ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। क्योंकि उसको पढ़ाया ही जा रहा है कि पर्यावरण आपके आसपास का घेरा है आप नहीं है।

पाश्चात्य विचार- आजकल बच्चों के समक्ष पर्यावरण को किस प्रकार परिभाषित किया जा रहा है। उसके संकेत के रूप में यहां कुछ पश्चिमी विचारकों की परिभाषाओं का जिक्र करना आवश्यक है।

जे.एस. रॉस के अनुसार- “ पर्यावरण या वातावरण वह वाह्य शक्ति है जो हमें प्रभावित करती हैं।”

डगलस एवं हालैण्ड के अनुसार- “ पर्यावरण वह शब्द है जो समस्त वाह्य शक्तियों, प्रभावों और परिथतियों का सामूहिक रूप से वर्णन करता है जो जीवधारी के जीवन, स्वभाव, व्यवहार तथा अभिवृद्धि, विकास तथा प्रौढता पर प्रभाव डालता है।”

हर्स, कोकवट्स के अनुसार- “ पर्यावरण इन सभी बाहरी दशाओं और प्रभावों का योग है तो प्राणी के जीवन तथा विकास पर प्रभाव डालता है।”

यह सभी विचार 50 साल से ज्यादा पुराने नहीं है। इन विचारों में जो सबसे प्रमुख बात गौर करने लायक है वह यह है कि पर्यावरण एक बाहरी तत्व या एक बाहरी शक्ति है जो मानव को चारों ओर से आवृत किए हुए हैं। पश्चिमी जगत में पर्यावरणीय विचार की पृष्ठभूमि देखें तो यह विचार प्रकृति की क्षतिपूर्ति के आधार पर प्रकट हुआ है। यूरोप में सोलवीं सदी के बाद औद्योगिकरण, उपनिवेश की प्रक्रिया ने पृथ्वी के संसाधनों पर दबाव बढ़ाना प्रारंभ कर दिया। यूरोप द्वारा अन्य देशों को उपनिवेश बना कर आर्थिक संसाधनों की लूट शुरू हो गई। यदि हम केवल अमेरिका में देखें तो सोलवीं सदी के प्रारंभ में अमेरिका पहुंचे यूरोपियन ने अमेरिका के संसाधनों का दोहन करना प्रारंभ कर दिया और वहां के मूल निवासियों को प्रताड़ित करना शुरू किया। जिसके परिणाम स्वरूप अमेरिका के मूल निवासी जंगलों में जाकर बसने लगे। जिससे वहां के जंगलों पर जनसंख्या का दबाव बढ़ने लगा इस दबाव को रोकने के लिए 1626 में अमेरिका के प्ले माउथ ताऊ में लकड़ी काटने को रोकने के लिए कानून बनाया गया। इसी प्रकार यूरोप में भी पर्यावरण के संरक्षण को लेकर धीरे-धीरे अनेक राष्ट्रीय अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कानून बनाए गए। लेकिन यदि अगर हम इन कानूनों की रूपरेखा देखें तो स्पष्ट हो जाता है कि इन कानूनों को बनाने का आधार प्रकृति का बचाव कम अपने लिए संसाधनों का भविष्य के संदर्भ में संरक्षण ज्यादा है। 19वीं सदी के अंत में फ्रांस में प्रकृति के दोहन को सही सिद्ध करने के लिए संभव वादी विचार का जन्म हुआ।

फ्रांसीसी भूगोलवेत्ता, मिस्टर लुसिएन फ़ेवरे [1878 से 1956] ने नियतत्ववाद की अवधारणा का विरोध किया, और भूगोल में संभावनावाद सिद्धांत की अपनी अवधारणा दी।

फ़ेवरे की संभावनावाद अवधारणा के अनुसार "मनुष्य निष्क्रिय तत्व नहीं है, मनुष्य सक्रिय एजेंट है। मनुष्य पर्यावरण को बना सकता है, बदल सकता है, नष्ट कर सकता है" यूरोप में 15वीं सदी में पुनर्जागरण काल प्रारंभ हुआ। वैसे तो पुनर्जागरण काल एक सांस्कृतिक और धार्मिक आंदोलन था लेकिन इस आंदोलन के तीन प्रमुख दृष्टिकोण भौगोलिक खोजें उपनिवेशीकरण और पूंजीवाद का अभ्युदय सीधे तौर पर प्रकृति के दोहन से संबंधित थे। क्योंकि पूंजीवाद के आधार के रूप में पूरे यूरोप में 17 वी सदी में औद्योगिकरण की प्रक्रिया प्रारंभ हुई और पूरे यूरोप के प्राकृतिक संसाधनों का जबरदस्त दोहन प्रारंभ हो गया। साथ ही संसाधनों की पूर्ति के लिए पूरे यूरोप में उपनिवेशीकरण का दौर प्रारंभ हो गया। इंग्लैंड फ्रांस, स्पेन, पुर्तगाल आदि देशों ने अमेरिका तथा एशियाई देशों पर कब्जा करके उनके संसाधनों का प्रयोग करना शुरू कर दिया। औपनिवेशिक देशों में स्थानीय लोग अपने संसाधनों का दोहन ना कर सकें इसलिए पर्यावरण संरक्षण कारी कानूनों का भी निर्माण किया गया। यह एक दोगली व्यवस्था थी जिसमें यूरोप के देश संसाधनों का अनियंत्रित दोहन कर रहे थे, वही स्थानीय निवासियों को रोका जा रहा था। बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में जब एशियाई देशों ने औद्योगिकरण की प्रक्रिया प्रारंभ की और अपने संसाधनों का दोहन शुरू किया तो यूरोप और अमेरिका में प्रकृति के संरक्षण की दुहाई देना शुरू कर दिया, क्योंकि

अमेरिका और यूरोप पूरे विश्व के संसाधनों पर अपना अधिकार समझते हैं। इसलिए पश्चात जगत से प्रकृति के क्षतिपूर्ति के लिए पर्यावरण शब्द की उत्पत्ति की गई। यूरोप के लिए पर्यावरण एक बाहरी तत्व है मानव के साथ उसका संबंध है लेकिन एकात्म नहीं है क्योंकि मानव का यदि यूरोप की दृष्टि में पर्यावरण से एकात्म होता तो यूरोप अपने लिए संभव वादी विचार और शेष विश्व के लिए संरक्षण वादी विचारों पर जोर नहीं देता। इसके विपरीत भारतीय दृष्टिकोण में मानव और प्रकृति दोनों में सदा से एकात्म रहा।

भारतीय विचार -

पर्यावरण बोध के बारे में यदि हम भारतीय विचारों पर प्रकाश डालें तो पाएंगे की भारतीय विचार पश्चिमी विचारों के बिल्कुल विपरीत है। जहां पश्चिम में पर्यावरण और मानव दोनों अलग अलग होकर एक दूसरे से अंतर संबंधों द्वारा जुड़े हैं वहीं भारतीय विचारों में पर्यावरण और मानव दोनों में एकात्म है यदि हम भारतीय और पश्चिमी विचारों को और ठीक से समझने का प्रयास करें तो एक उदाहरण से समझ सकते हैं की पश्चिमी जगत में मानव और पर्यावरण के संबंध में नियतिवाद और संभव बाद दो विचारधाराएं हैं जहां नियतवाद में पर्यावरण प्रमुख है मानव नहीं, वहीं संभववाद में मानव प्रमुख है प्रकृति नहीं। इसका तात्पर्य है की प्रमुखता किसी की भी हो लेकिन मानव और पर्यावरण दोनों में एकात्म नहीं है दोनों अलग-अलग हैं।

भारतीय विचारकों के अनुसार मानव और पर्यावरण दोनों में कोई भी अंतर नहीं है। दोनों का निर्माण एक ही सत्ता से संबंधित है जहां पर्यावरण का निर्माण पांच तत्वों से हुआ है वही मानवीय शरीर भी पांच तत्वों से ही निर्मित है। भारत में पर्यावरण और प्रकृति को सामान्य रूप से अलग नहीं माना गया है। प्रकृति को ही भगवान माना जाता है। भगवान (संस्कृत : भगवत्) सन्धि विच्छेदः भ्+अ+ग्+अ+व्+आ+न्+अ, भ = भूमि, अ = अग्नि, ग = गगन, वा = वायु, न = नीर

भगवान पांच तत्वों से बना/बनाने वाला है। भारतीय परंपरा के अनुसार पर्यावरण बोध प्राचीन काल और नवीन काल दो धाराओं के आधार पर समझने का प्रयास करेंगे। भारत में ही नहीं अपितु समस्त विश्व में सबसे प्राचीन ग्रंथ वेद है। वेदों में पर्यावरण के संदर्भ में जो विचार दिए हैं उनसे आप समझ सकते हैं कि मानव पर्यावरण एकात्म का विचार वैदिक काल से ही स्थापित है। **वैदिक विचार** - पर्यावरण की वैदिक परिभाषा के अनुसार सृष्टि की उत्पत्ति दो प्रकार से हुई है। देवी तत्व (सकारात्मक) एवं आसुरी तत्व (नकारात्मक) - द्वाँ भूतसर्गो लोकेऽस्मिन्दैव आसुर एव च (गीता 16/06)। इन आसुरी अर्थात् नकारात्मक तत्वों से सुरक्षा के लिए जिस कवच की आवश्यकता होती है, उसे ही परि-आवरण अथवा पर्यावरण (परितः आत्रियते येन तत् पर्यावरणम्) कहा गया है। विश्व - संस्कृति के प्राचीनतम ग्रंथ वेद में पर्यावरण को परिधि, आवरण, परिभू, परिवृत, उल्ब आदि अनेक संज्ञाओं से पारिभाषित किया गया है। सृष्टि के उद्भव को समर्पित ऋग्वेद के सुप्रसिद्ध 'नासदीय सूक्त' के प्रथम मंत्र में ही इस विषय पर जिज्ञासा प्रकट की गई कि सृष्टि के पूर्व न सत् था, न असत् था न लोक थे, न आकाश था न उससे परे कुछ था, तब किसने हमें ढँक रखा था (आवरीवः-आवरण), क्या जल था?

नासदासीन्नो सदासीत् तदानां नासीद्रजा नो व्योमा पुरो यत्। किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भ
किमासीद्गहनं गभीरम् ।

- (ऋ. 10/129/1)



ऋग्वेद के अनुसार पहले ना तो सृष्टि थी और ना ही कोई रचना केवल परमपिता परमेश्वर विद्यमान थे । परमपिता के विचार से ही घोर अंधकार में निगूढ 'तमस् तत्त्व' (ब्लैक मैटर) प्रकाशित होने लगा । इस प्रक्रिया में ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति हुई जिसके नाभि के रूप में अंतरिक्ष, सिर के रूप में द्युलोक और आधारचरण के रूप में पृथ्वी अस्तित्व में आयी। वहीं से पर्यावरण का आरंभ हुआ। हमारी औपनिषदिक मनीषा ने इसे बड़े सजीव शब्दों में निरूपित किया है-'उस परमेश्वर ने कामना की कि मैं अकेला हूँ अनेक हो जाऊँ। इसके लिए उसने तपस्या की। तपस्या करके इन सब की रचना की। इसे रचकर वह स्वयं इसमें संप्रविष्ट हुआ। उसी परमेश्वर से सबसे पहले आकाश उत्पन्न हुआ। आकाश से वायु उत्पन्न हुआ। वायु से तेज उत्पन्न हुआ। तेज से जल उत्पन्न हुआ। जल से पृथ्वी उत्पन्न हुई। पृथ्वी से वनस्पतियाँ उत्पन्न हुई। वनस्पतियों से अन्न उत्पन्न हुआ। अन्न से पुरुष (जीव) उत्पन्न हुआ। '

सोऽकामयत । बहु स्यां प्रजायेयेति । स तपोऽतप्यत ।

स तपस्तप्त्वा इदः सर्वमसृजत । यदिदं किञ्च । तत्सृष्ट्वा । तदेवानुप्राविशत्.....

- (तै.उप. 2/6/4)

रेतसः त्पुरुषः । तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः । आकाशद्वायुः । वायोरग्निः । अग्नेरापः।

अद्भ्यः पृथिवी । पृथिव्या ओषधयः। ओषधिभ्योऽन्नम्। अन्नाद्रेतः ।।

- (तै०उप० 2/1/1)

सृष्टि के ये समस्त तत्व सम्मिलित होकर पर्यावरण का निर्माण करते हैं। जिसमें समस्त प्राणी जीवन को धारण कर पाते हैं। इसी पर्यावरण के अनुकूल रहने की प्रार्थना अथर्ववेद में की गयी है।

'सर्वा वै तत्र जीवति गौरश्वः पुरुषः पशुः । यत्रेदं ब्रह्म क्रियते परिधिर्जीवनाय कम् ' ॥

- (अथर्व० 8/2/25)

सृष्टि की संरचना में प्रथम तत्व परमात्मा है और अंतिम तत्व जीवात्मा और इन दोनों के मध्य में भौतिक रूप में सृष्टि विद्यमान है। जीवन पहले व्यष्टि (व्यक्ति) फिर समष्टि (लोक), फिर सृष्टि (जगत) अन्ततः पुनः परमात्मलीन होकर परमेष्ठि या ब्रह्मरूप हो जाता है और सृष्टि पूर्णता को प्राप्त होती है। यही । पर्यावरण का रहस्य है। इसी से जीवन की रक्षा है। पर्यावरणीय संगठन पर हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों और मनीषियों ने बड़ा गंभीरता से विचार किया था और इसके संरक्षण और संवर्धन के लिए उपायों को बड़ा व्यवस्थित और सुनियोजित तरीकों से दैनिक जीवन और आचरण में समावेशित किया था। 285,268

एकात्म मानववाद -मानव पर्यावरण एकात्म को और स्पष्ट करने के लिए नवीन भारतीय विचारों पर दृष्टि डालें तो इस विचार को सबसे व्यवस्थित ढंग से पंडित दीनदयाल उपाध्याय अपने एकात्म मानव दर्शन के आधार पर प्रस्तुत किया है। पंडित दीनदयाल जी के अनुसार यदि व्यक्ति स्वयं और संपूर्ण वैश्विक व्यवस्था के बीच एकात्म संबंध स्थापित कर कर चलता है तो व्यक्ति के सारे व्यवहार पर्यावरण और समाज के प्रति सहिष्णुता पूर्ण होंगे होंगे। पंडित जी अपने एकात्म मानव दर्शन में स्पष्ट करते हैं की समस्त सृष्टि उस परमपिता परमेश्वर का ही अंश है। जो इस ब्रह्मांड में प्रत्येक कण कण में विद्यमान है ऊपर चित्र से स्पष्ट है की संपूर्ण सृष्टि उस परमपिता के अंश के कारण एक आत्मा जुड़ी हुई है। मानव को इस एकात्म का अनुभव करके सृष्टि के समस्त अंगों के साथ सामंजस्य स्थापित करना परम आवश्यक है।

निष्कर्ष -ऊपर वर्णित दोनों विचारों के विश्लेषण के बाद यह स्पष्ट रूप से ज्ञात होता है की भारतीय और पाश्चात्य जगत में पर्यावरण बोध की अवधारणा जीवन के स्वरूप और उद्देश्य से जुड़ी हुई है। जहां पश्चिमी जगत के लिए पर्यावरण वह बाहरी तत्व है जो संसाधनों के रूप में जीवन की भौतिक आवश्यकताओं को पूरा करने में उपयोगी है, प्राचीन काल से आज तक पश्चात जगत अपनी सभ्यता के भौतिकवादी विकास का पहला चक्र पूरा कर रहा है और अपनी उपभोग वादी संस्कृति के कारण संपूर्ण विश्व के पर्यावरण को असंतुलित कर दिया है। वहीं भारत पूर्व वैदिक काल से आज तक न जाने कितनी सभ्यताओं का पालना रहा है। लेकिन प्रकृति का इतना छरण वर्तमान तक नहीं कर पाया, क्योंकि भारतीयों ने पर्यावरण के साथ एकात्म स्थापित किया और पर्यावरण को पूज्यनीय और संसाधनों को प्रकृति का आशीर्वाद समझा। वहीं दूसरी तरफ संसाधनों को प्रकृति का मुफ्त उपहार समझा गया और उनका जमकर दोहन किया गया। इसी का परिणाम है कि आज पर्यावरण असंतुलित और प्रदूषित है यदि हम भारतीय पर्यावरण बोध की समझ सामान्य जनमानस के समक्ष प्रस्तुत करते हैं तो पर्यावरण का संरक्षण और उसके आशीर्वाद स्वरूप संसाधनों का चिरस्थाई उपयोग कर सकते हैं।

संदर्भ सूची-

- 1- पांडेय, ओम प्रकाश :भारत वैभव ,2020 नेशनल बुक ट्रस्ट, पृष्ठ संख्या 285 286
- 2- डेफिनिशन एंड कंसेप्ट ऑफ द एनवायरनमेंट- <https://www.studocu.com>
- 3- शर्मा ,भगवती प्रसाद :बढ़तापर्यावरण संकट और एकात्म मानव दर्शन की प्रासंगिकता ,
<https://www.researchgate.net/publication/324168098>
- 4- बिष्ट,शेर सिंह : पर्यावरण एवं भारतीय संस्कृति 2018, अंकित प्रकाशन नैनीताल
- 5- द्विवेदी ,कैलाश नाथ: ऋग्वैदिक भूगोल 1984 ,साहित्य निकेतन कानपुर